सांस्कृतिक विविधता और विश्वव्यापी शान्ति:
मणिपुर की साझी विरासत

दीप्ति प्रिया मेहरोत्रा

भारत की "मुख्यभूमि" पर बसने वाले लोगों को पूर्वोत्तर राज्य कुछ रहस्यमयी से प्रतीत होते हैं। इम्फ़ाल की अपनी यात्रा से जब मैं वापस लौटी तो एक से अधिक दिल्लीवासियों ने मुझसे सवाल किया "ये कहां है?" अपनी इस अनभिज्ञता में शिक्षित व अशिक्षित दोनों एक समान ही हैं।

यह परी लोक समान क्षेत्र लगभग दो सहस्राब्धियों तक एक प्रभु-राज्य था। स्वायत्त परन्तु गरिमामय, शान्ति प्रिय परन्तु अपने वीर योद्धाओं की शान पर गौरान्वित। आज मणिपुरवासी भारत के एक छोटे से हिस्से में बसे हैं और असन्तुष्ट हैं। उनके दिलों में एक सुलगती टीस, अतीत के सुनहरे पलों की यादें हैं जो उन्हें और अधिक तकलीफ़ पहुंचाती हैं।

इस भूमि की प्राचीन जनश्रुति शर्मिला की रगों में बहती है। तॉनसीजा देवी ने राजा-रानी, देवी-देवताओं और आम लोगों के हैरतंगेज़ कारनामों से मणिपुर का इतिहास उसकी आंखों के सामने जीवित कर दिया था।

उन्होंने शर्मिला को बताया कि मणिपुर एक ज़माने में 'सना लईबक' या स्वर्ण भूमि-एक पवित्र जगह के नाम से जाना जाता था। वहां 1891 तक एक ही राजवंश निंगथोजोस के राजाओं का शासन था। इस वंश के प्रथम राजा नौगडा लाइरेन पखंगबा और रानी लाइमा लाइसना ने इम्फ़ाल घाटी में अपने राज्य की राजधानी कांगला की स्थापना की। तोनसीजा देवी बताती हैं, *रानी लीमा एक माईबी थीं, यानी एक पुजारिन। उन्होंने पंखगबा से विवाह किया। लीमा लाइसना और उनका भाई चिंनखांग पोइरोथेन, पोइरेई जनजाति से थे। लाइमा अपने साथ दो सौ प्रकार की फल व सब्ज़ियां लेकर आई थीं जिसमें से सौ पकाकर व सौ कच्ची खाई जाती थीं। चिंगखाँग पहली बार मणिपुर में आग लेकर आए थे। आज भी इम्फ़ाल घाटी के आंड्रो गांव में यह अग्नि प्रज्जवलित है।*

इसके पश्चात पोइरेइ जो बाद में 'मेतई' जिसका अर्थ 'अग्नि लाने वाला' होता है कहलाए जाने लगे। आज भी अधिकांश 'मेतई' परिवार अपने घर के किसी प्रमुख स्थान पर एक फुंगा या अंगीठी रखकर अग्नि प्रज्जवलित रखते हैं।

जिस समय तक 1903 में आइरॉम तॉनसीजा देवी का जन्म हुआ मणिपुर एक स्वतंत्र राज्य नहीं था। बड़ी होने पर उन्हें पता चला कि अंग्रेज़ों के हाथों मणिपुर के शासकों की पराजय हुई थी।

मैं अप्रैल 2007 में 104 वर्षीय तॉनसीजा देवी से मिली। उनसे मिलने के लिए हमें एक घंटा इंतज़ार करना पड़ा वह अपना सुबह का नाश्ता कर रही थीं जो एक कटोरा चावल, केला व लाल चीनी का था।

कड़क सफेद ब्लाउज़ और 'फनेक' पहने यह महिला शान से अपने घर के बाहर मिट्टी के चबूतरे पर आकर बैठीं। उनकी आवाज़ मुखर है। हमारा अभिवादन करके वे पनीली आंखों से हमें देखती हैं और मुस्कुराकर अपना हाथ हमारी ओर बढ़ा देती हैं। फिर कहती हैं- *मेरे मन में उनके लिए बहुत प्यार है पर उन पर मुझे तरस भी आता है।* प्रकृति की गोद में उनकी अपनी स्थिर ज़िंदगी उन्हें एक आराम और जड़ता प्रदान करती है। अपनी पोती शर्मिला के दोस्त होने के नाते वह हमारे साथ स्नेह और नेकी से पेश आती हैं।

मैं उनकी अच्छी सेहत, आत्म-विश्वास से भरे जीवन और ज़मीन से जुड़ाव से बेहद प्रभावित हुई। हालांकि उनकी याददाश्त कुछ कमज़ोर हुई है और वे अपनी बात दोहराती रहती हैं फिर भी मैं उनसे पूछती हूं, द्वितीय नूपिलान के बारे में उन्हें क्या याद है? मुझे अहसास था कि 1939 में जब मणिपुर में महिलाओं का द्वितीय युद्ध लड़ा गया था तब तॉनसीजा देवी की उम्र लगभग पैतींस वर्ष रही होगी- शर्मिला की आज की उम्र के बराबर।

मैं सोच रही थी कि शायद इन दोनों महिलाओं के बीच कोई अदृश्य जुड़ाव की डोर है जो एक दूसरे को प्रभावित करती है और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक विद्रोह की शक्ति संचारित करती है।

प्रश्न पूछते ही यादों का सैलाब उनकी आंखों के सामने तैर जाता है। तॉनसीजा देवी जीवन्त, सवाक् और सुसंगत होकर समझाती हैं, 'उस ज़माने में चावल की कीमत थी, पच्चीस पैसे का तीस किलो। अचानक कीमतें तीन/चार रुपये तक बढ़ गईं। हमारे लिए चावल खरीदना मुश्किल हो गया। मणिपुर की सभी औरतें सड़कों पर निकल आईं। उनमें मैं भी थी। हम तीन दिनों तक दरबार के बाहर बैठे रहे। महाराज ने हमारी बात सुनी। चावल की कीमत घटाई गई जिससे हम सब भरपेट खाना खा सकें और पहले की तरह जी सकें।'

हम औरतें नूपिलान के समय अपने 'तेम' लेकर गई थीं। तेम एक लकड़ी का औज़ार है जो बुनाई के काम आता है। औरतों ने इसे अपनी सुरक्षा के लिए एक हथियार के रूप में इस्तेमाल किया। उनका बेटा मंगलेम सिंह हमारे लिए घर के अंदर से 'तेम' लेकर आया। 'तेम' मणिपुरी औरतों के जीवन का प्रतीक है- औरतें कपड़ा बुनती हैं और समाज में अमन बुनने की भी ख़्वाहिश रखती हैं।

11 अगस्त 1947 में मणिपुर के महाराजा बोधचंद्र और गवर्नर जनरल माउंटबेटन ने एक अनुबंध पर हस्ताक्षर किए जिसके ज़रिए मणिपुर को स्वशासन का अधिकार मिला। 15 अगस्त को मणिपुर एक प्रभु-राज्य बना जिसका अपना संविधान था। परन्तु 1948 में मणिपुर में चुनाव कराये गये और प्रजातंत्रीय सरकार का गठन हुआ। महाराजा ने अपने मंत्रीगण से मश्विरा लेकर मुख्यमंत्री नियुक्त किया। 15 अक्टूबर 1949 को महाराजा ने एक समझौते पर दस्तखत किए जिसके तहत मणिपुर भारत

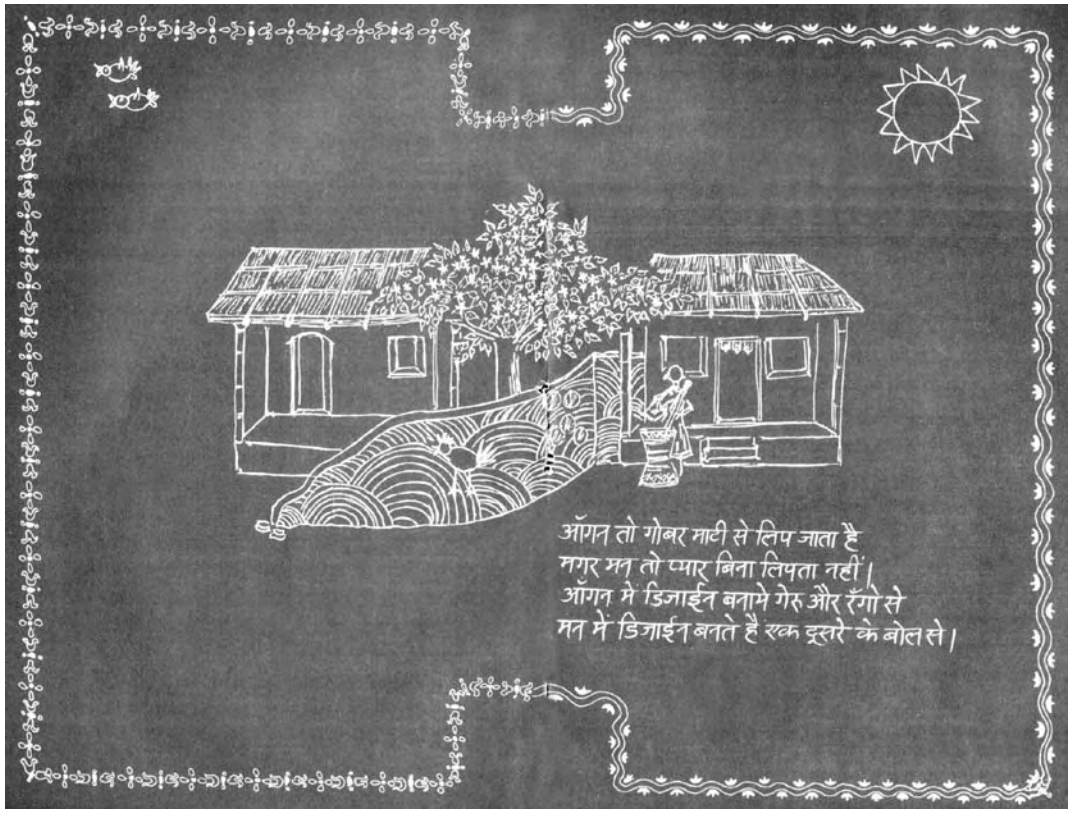

चित्र: जागोरी नोटबुक '90 से

का ग्रेड-सी राज्य बन गया। महाराजा ने इस समझौते पर हस्ताक्षर अपने मंत्रीमंडल से सलाह-मश्विरा किये बगैर किए थे।

मणिपुर के लोगों ने इस विलयन को भारतीय सरकार के एक धोखे के रूप में देखा। उन्हें लगा सरकार ने महाराजा को बरगला लिया है। इस विलयन के बाद भारत सरकार ने मणिपुर में गठित मंत्रीमंडल, व संविधान को रद्द कर दिया। 1950 में जब भारतीय संविधान लागू किया गया तब मणिपुर को ग्रेड-सी राज्य के रूप में शामिल कर लिया गया। उधर मणिपुर में प्रजातंत्रीय प्रशासन के पुनर्गठन के लिए आंदोलन जारी रहा। 1972 में मणिपुर को राज्य का दर्जा मिल गया परन्तु आम लोगों के जीवन में कोई परिवर्तन नहीं आया। अपनी मांगों के पूरा न होने के कारण वे सरकारी विकास प्रयासों का विरोध करने लगे।

शर्मिला अपने लोगों के इस असंतोष से भली-भांति परिचित थी। सम्मान और विकास की अपनी मांगे व्यक्त करने के लिए विद्रोही समूह अक्सर हिंसक रास्ते इख्तियार करते थे। कम उम्र से ही शर्मिला इस विरोधाभास से अचंभित हो जाती थीं- उसे यह समझ नहीं आता था कि हिंसक तरीकों से अमन कैसे लाया जा सकता है? इसलिए उसने विद्रोह के मूल स्रोतों को समझने का प्रयास तो किया परन्तु हिंसक तरीकों का सदैव विरोध किया।

1949 के बाद से यह स्पष्ट हो गया था कि मणिपुर के लोगों की नज़र में भारत सरकार ने छल-कपट का सहारा लेकर मणिपुर को भारत का हिस्सा बनाया था। उन्हें यह भी लगता था कि सरकार ने मणिपुर को नज़रअंदाज़ करके लोगों के साथ भेदभाव कर रवैया अपनाया था। 1962 में असम के नागा हिल ज़िले को अलग राज्य का दर्जा दिया गया। पर मणिपुर अगले दस वर्ष तक केंद्र शासित क्षेत्र ही रहा। मणिपुर की प्राचीन भाषा मणिपुरी, जो 'मेतई' जनसमूह की मातृ भाषा थी को भी आंठवी सूची में शामिल नहीं किया गया।

जन आधारित विकास और प्रजातंत्रीय मांगों के न पूरे होने ने मणिपुरी युवाओं के दिलों में आक्रोश भर दिया जो विद्रोह का मुख्य कारण बना। जब शांतिपूर्ण मांगों को भी अनसुना कर दिया गया तब लोगों ने हिंसक तरीकों से विद्रोह जताया। सरकार ने अमानवीय हिंसा के बल पर इस विद्रोह को काबू में करने की कोशिश की। सरकार के इसी बेरूखी के रवैये ने आज मणिपुर को इस राह पर लाकर खड़ा कर दिया गया।

शर्मिला अक्सर अपनी भूख हड़ताल को एक 'आत्मिक' क्रिया कहती हैं जो महात्मा गांधी द्वारा रखे गये असंख्य उपवासों की तरह हैं। यह कोई आसान तरीका नहीं है। इसमें पूरी शिद्दत चाहिए और यह अपने स्वास्थ्य, अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता की कीमत पर रखा जाता है। वह समझाती हैं, *मेरा उपवास मेरी मातृ-भूमि के लिए है। जब तक "आर्मड फ्रार्सस कानून" रद्द नहीं किया जाएगा तब तक मैं अपनी भूख-हड़ताल खत्म नहीं करूंगी।*

भविष्य की बात बताते हुए वह कहती हैं, *मुझे पूरी उम्मीद है। मेरा संघर्ष सच के लिए है और सच की हमेशा जीत होती है। ईश्वर मुझे हिम्मत प्रदान करते हैं इसलिए मैं इन कृत्रिम साधनों के सहयोग से जीवित हूं।*

अपने शरीर को एक हथियार के रूप में इस्तेमाल करके सच्चाई के लिए संघर्षरत शर्मिला पीड़ा और अभाव से समझौते करती हैं। पीड़ा इस चुनौती का हिस्सा है जिसे सहने के लिए सशक्तता और सहनशक्ति का विकास उसे खुद ही करना होगा। वह दावा करती है कि यह काम मुश्किल नहीं है। वह वही कर रही है जो वह चाहती है। उनके अपने शब्दों में हम सब इस दुनिया में कोई खास काम करने आते हैं। और हम सब अकेले ही आते हैं। मैं भी अपना खास काम कर रही हूं।

शर्मिला खुद को न्याय और सच्चाई का प्रतीक मानती हैं। उसका सर्वव्यापी सच गांधी के सच के सिद्धांत से मिलता जुलता है। महात्मा गांधी जी का स्वराज के लिए संघर्ष सर्वव्यापी सत्य की खोज भी थी जो सभी मनुष्यों को एक साथ जोड़ती है।

बड़ी कम्पनियों व राष्ट्रीय गैर-ज़िम्मेदारी के दौर में कार्यकर्त्ता व अमन विद्वान सभी आम नागरिकों को सक्रिय कार्यवाई व ज़िम्मेदारी के लिए प्रेरित कर रहे हैं। पर शर्मिला को कोई प्रेरणा नहीं चाहिए। वह करोड़ों आम लोगों की ख्वाहिशों का प्रतिनिधित्व कर रही हैं। बातचीत और

जन-भागीदारी आधारित विश्व की रचना के लिए लड़ रही शर्मिला दूसरों को निडरता से बोलने के लिए प्रोत्साहित कर रही हैं। जॉन गालटुंग के शब्दों में, *अमन संघर्ष को अहिंसा, सृजनात्मकता और परानुभूति से संभालने का कौशल है।*

एक प्राचीन 'मेतई' पौराणिक कथा इस कथन को हकीकत मे तब्दील करने की संभावना दिखाती है-

एक बार ईश्वर और इंसानों तथा विभिन्न वंशों के बीच जंग छिड़ गई। उसे रोकने के लिए देवियों ने बीच में हस्तक्षेप किया। उन्होंने दोनों गुटों के बीच एक दावत आयोजित की जहां वे बिक्री के लिए कुछ चीज़ें भी लाईं। जब दोनों पक्षों ने एक ही हांडी से भोजन किया तो दोनों के बीच एक रिश्ता कायम हो गया जिसके कारण दोनों के बीच समझौता हुआ तथा अमन की बहाली हुई।

ऑरंबम आँगबी मेमचॉबी बताती हैं कि मणिपुरी समुदायों में 'पुखरेलिया' औरतें अमन बहाली में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। तांगखुल नागा समुदाय में 'पुखरेलिया' महिलाएं दो संघर्षमय समूहों या गांवों के बीच शांति स्थापित करती थीं और इसलिए उन्हें आदर के साथ देखा जाता था। एक औरत की शादी जब दूसरे गांव में होती थी तब वह 'पुखरेलिया' कहलाती थी। चूंकि उसका संबंध दोनों गांवों से होता था इसलिए कोई उसे नुक्सान नहीं पहुंचाता था। पारम्परिक समय में ये महिलाएं झगड़े और मनमुटाव खत्म कराने में अहम भूमिका अदा करती थीं।

यह लेख दीप्ति प्रिया मेहरोत्रा की पुस्तक, 'बर्निंग ब्राइटः आईरॉम शर्मिला एण्ड द स्ट्रगिल फ़ॉर पीस इन मणिपुर' के अंशों पर आधारित है।

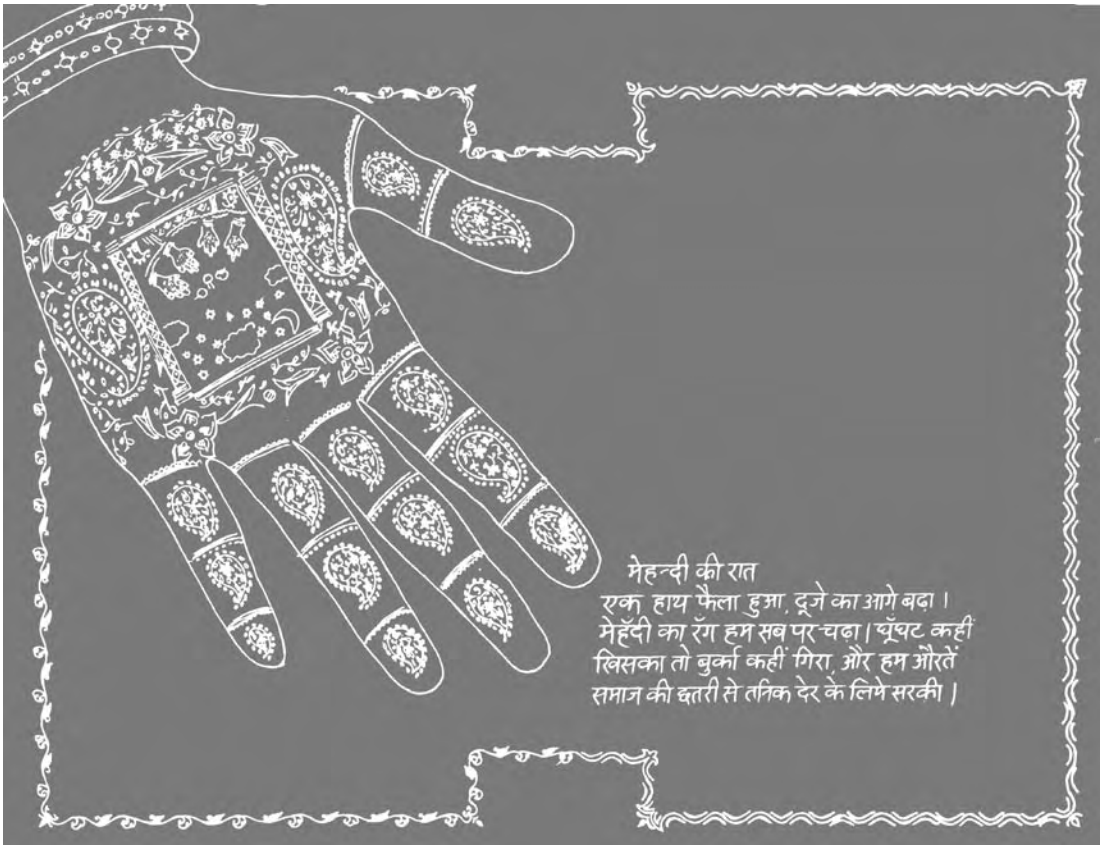

चित्र: जागोरी नोटबुक '90 से